SEC.9 UNDER THE CODE OF CIVIL PROCEDURE.1908.BY.BANSHLOCHAN PRASAD.ASSISTANT PROFESSOR NGB(DU)PRAYAGRAJ

Scanned with CamScanner

धारा 9. जब तक कि वर्जित न हो, न्यायालय सभी सिविल वादों का विचारण करेंगे –

परिचय – अधिकारिता से अभिप्राय न्यायालय की उस शक्ति से है जिसके अंतर्गत वह किसी वाद, अपील या आवेदन को ग्रहण कर सकता है तथा सुनवाई के बाद उस पर निर्णय दे सकता है |

अधिकारिता से तात्पर्य निम्नलिखित दो बातों से है –

1. वाद की विषयवस्तु की अधिकारिता

2. आदेश पारित करने की शक्ति या अधिकार

न्यायालय की सक्षमता – कोई न्यायालय सक्षम तब कहा जात है जबकि उसमे तीनों तरह की अधिकारितायें (**धन सम्बन्धी, विषयवस्तु सम्बन्धी तथा स्थानीय अधिकारिता**) निहित हो आर्थिक अधिकारिता का विनिश्चय जहां **धारा 6** और **धारा 15** के प्रावधानों के आधार पर होता है वही विषयवस्तु एवं स्थानीय अधिकारिता का विनिश्चय **धारा 16** से **धारा 20** तक के प्रावधानों के आधार पर होता है |

जब किसी सिविल न्यायालय में उपरोक्त तीनों प्रकार की अधिकारितायें विद्यमान हो जाती है तो यह प्रश्न उठता है कि क्या इस सन्दर्भ में किसी और शक्ति का निहित होना आवश्यक है |

धारा 9 उपरोक्त के अतिरिक्त एक और तत्व पर जोर देती है –

प्रावधान की प्रकृति – **धारा 9** आदेशात्मक प्रकृति की है अर्थात इसमें निहित औपचारिकताओं का अनुपालन होना अनिवार्य है।

Scanned with CamScanner

धन सम्बन्धी अधिकारिता भी सरकार द्वारा निश्चित कर दी जाती है।

स्थानीय अधिकारिता भी समय-समय पर सरकार द्वारा निश्चित कर दी जाती है।

<u>**न्यायालय**</u> – न्यायालय होने के लिए अनिवार्य शर्त है कि, न केवल वह एक न्यायिक अधिकरण हो अपितु इसमें एक अंतिम निर्णय देने की शक्ति हो जो अंतिमता और प्राधिकारिता से युक्त हो।

<u>**धारा 9 के लागू होने की शर्तें**</u> – **धारा 9** के तहत कोई न्यायालय किसी वाद का संज्ञान तभी कर सकेगा, जबकि दो शर्तें पूरी हो जाये –

1. यह कि वाद दीवानी प्रकृति का होनी चाहिए, तथा

2. इस प्रकार के वाद के विचारण हेतु न्यायालय को अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से वर्जित न किया गया हो।

<u>**दीवानी प्रकृति का वाद**</u> - "ऐसा वाद जिसमे किसी महत्वपूर्ण अधिकार के प्रवर्तन की मांग की जाती है, दीवानी प्रकृति का वाद कहलाता है।"

धारा 9 के स्पष्टीकरण 1 के अनुसार सिविल प्रकृति का वाद वह होता है जिसमें संपत्ति सम्बन्धी या पद सम्बन्धी अधिकार

Scanned with CamScanner

निवारित होता है, चाहे ऐसा अधिकार धार्मिक कृत्यों या कर्मो सम्बन्धी प्रश्नों के निर्णय पर पूर्ण रूप से आधारित हो |

सन 1976 में संशोधन के माध्यम से **प्रथम स्पष्टीकरण** के सन्दर्भ में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि उपरोक्त के सन्दर्भ में यह तर्कहीन होगा कि उसके साथ कोई शुल्क जुड़ा है कि नहीं, साथ ही साथ इसमें यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि ऐसे मामलों में पद सम्बन्धी अधिकारों का किसी विशिष्ट स्थानों से जुड़ा होना अप्रासंगिक होगा जैसा कि **स्पष्टीकरण 2** के अध्ययन से स्पष्ट होता है |

स्पष्टीकरण 1 और **2** के के संयुक्त अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि -

1. यदि किसी वाद में मुख्य प्रश्न पद या संपत्ति सम्बन्धी अधिकारों से जुड़ा हो तथा **स्पष्टीकरण 1** में निर्दिष्ट पद के लिए कोई फ़ीस है या नहीं अथवा ऐसा पद किसी विशिष्ट स्थान से जुड़ा है या नहीं, या

2. उसी वाद में धार्मिक कृत्यों से सम्बंधित कोई प्रश्न गौण प्रश्न के रूप में विद्यमान हो, तो ऐसी स्थिति में वाद सिविल प्रकृति का होगा | किन्तु यदि किसी वाद में मुख्य प्रश्न धार्मिक कृत्यों से सम्बंधित हो तथा उस वाद में पद या संपत्ति सम्बन्धी अधिकार गौण प्रश्न के रूप में हो तो वह सिविल प्रकृति का नहीं होगा |

<u>निम्नलिखित को दीवानी प्रकृति का वाद माना गया</u> -

1. मंदिर या अन्य धार्मिक स्थल सम्बन्धी वाद

Scanned with CamScanner

2. पूजा के अधिकार के लिए वाद

3. धार्मिक या अन्य जुलूसों से सम्बंधित वाद

4. मुर्दा दफनाने के अधिकार के लिए विवाद

5. दीवानी अपराध या दुष्कृति के लिए क्षतिपूर्ति का वाद

6. संविदा भंग सम्बन्धी वाद

7. विशिष्ट अनुतोष अधिनियम के अंतर्गत विशिष्ट अनुतोष के लिए वाद

8. साझेदारी के लिए वाद

9. राजमार्ग के उपयोग के लिए वाद

10. विवाह विच्छेद या दाम्पत्य अधिकारों की पुनर्स्थापना के लिए वाद

11. लेखा के लिए वाद

12. यह घोषित करने के लिए वाद कि वह सरकारी सेवा में है या नही

13. अंश दान के लिए वाद

Scanned with CamScanner

14. जाति अथवा जाति की संपत्ति से निष्कासित किये जाने सम्बन्धी वाद

15. मताधिकार के लिए वाद

16. अधिकार एवं मूर्त या अमूर्त संपत्ति सम्बन्धी वाद

17. किराये या भाटक के लिए वाद

18. विधानमंडल के अधिनियमों की संवैधानिकता सम्बन्धी वाद

19. घोषणा सम्बन्धी वाद

निम्नलिखित वादों को सिविल प्रकृति का नही माना गया –

1. जाति से सम्बंधित वाद – धारा 9 का **सपष्टीकरण 1** के अनुसार जाति से तात्पर्य एक ऐसे पूर्ण परिभाषित समुदाय से है जो अपने आंतरिक उद्देश्यों में अपने नियमों और अधिनियमों से शासित होता है |

नगिंदर बनाम सोमनाथ के मामले में बम्बई उच्च न्यायालय ने कहा कि जातिगत प्रश्न वे प्रश्न हैं जो जाति की आंतरिक स्वतंत्रता अथवा सामाजिक संबंधों को प्रभावित करने से सम्बंधित है |

अतः यदि किसी व्यक्ति को जातिगत नियम तोड़ने के परिणामस्वरूप किसी जातिगत उत्सव **जैसे - विवाह, जाति, भोज या खानपान** या आदि से वंचित किया जाता है तो उससे

Scanned with CamScanner

भोज या खानपान या आदि से वंचित किया जाता है तो उससे उस व्यक्ति के किसी अधिकार का हनन नही होता है |

दूसरे शब्दों में उस व्यक्ति ने कोई विधिक अधिकार नही खोया है उसने एक सामाजिक अधिकार खोया है | ऐसा वंचित व्यक्ति दीवानी नियमावली में दावा नही कर सकता | वह केवल जाति न्यायालय का ही दरवाजा खटखटा सकता है |

लेकिन यदि किसी व्यक्ति को जाति से ही निकाल दिया जाता है तो उसके विधिक अधिकार का हनन होता है, वह निष्कासन उसकी विधिक हैसियत को प्रभावित करता है और वह अपने निष्कासन के विरुद्ध दीवानी वाद ला सकता है |

2. धार्मिक कृत्यों या कर्मो से सम्बंधित वाद –
अन्धुनिस्वामी बनाम टोडरस्वामी के मामले में स्वामी या मठाधीश द्वारा इस कारण वाद दायर करना कि उसे किसी विशेष अवसर पर पालकी में ले जाया जाये, दीवानी वाद नही होगा क्योकि इसमें विचारणीय प्रश्न का सम्बन्ध में स्वामी के गरिमा या सम्मान से जुड़ा हुआ है |

Scanned with CamScanner

वासुदेव बनाम बामन जी के वाद में यह कहा गया कि किसी पुजारी को इस बात के लिए मजबूर नही किया जा सकता है कि वह किसी प्रतिमा को किन्ही विशेष अवसरों पर सुसज्जित करे।

3. किसी पद के साथ जुडी हुयी गरिमा की रक्षा के लिए वाद – रंगचेटियार बनाम रंगास्वामी के मामले में **मद्रास उच्च न्यायालय** ने यह निर्धारित किया कि जहां पद के साथ जुड़ी हुई गरिमा का सम्बन्ध पारिश्रमिक से है जो लाभ का एक अंश है वहां जो प्रभावित हो रहा है वह संपत्ति का अधिकार है और दीवानी न्यायालय में इस प्रकार की गरिमा के लिए वाद संस्थित किया जा सकता है।

4. गोपनीयता के अधिकार से सम्बंधित वाद

5. स्वेच्छा से किये गये भुगतान सम्बन्धी वाद

6. राजनैतिक प्रश्नों से सम्बंधित वाद

7. लोक नीति के विरुद्ध वाद

8. ऐसा वाद जो किसी अधिनियम द्वारा अभिव्यक्ति रूप से वर्जित है

Scanned with CamScanner

उषाबेन बनाम भाग्य लक्ष्मी चित्र मंदिर के वाद में इस आधार पर वाद संस्थित किया गया कि **फिल्म जय संतोषी माँ** के प्रदर्शन से हिन्दुओं की भावनाओं को क्षति पहुचती है यहाँ यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह सिविल प्रकृति का वाद नही है |

अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से वादों का वर्जन –

मात्र किसी वाद के दीवानी प्रकृति के होने से ही न्यायालय को उसपर विचारण की अधिकारिता प्राप्त नही हो जाती है, अपितु यह भी आवश्यक है कि सिविल न्यायालय को उपरोक्त वाद के विचारण हेतु अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से प्रतिबंधित न किया गया हो |

अभिव्यक्त रूप से वर्जन – कोई वाद निम्नलिखित दो तरीके से न्यायालय में विचारण हेतु प्रस्तुत करने से वर्जित किया जा सकता है –

1. यदि किसी मामले विशेष के सन्दर्भ में किसी अधिनियम विशेष में व्यवस्था हो और उसी में स्पष्ट कर दिया गया हो कि वाद का उपयुक्त स्थल कहां होगा ? **जैसे –**

a. यदि कोई मामला औधोगिक विवाद से संबधित है तो ऐसा मामला **औधोगिक अधिकरण** के समक्ष **औधोगिक विवाद अधिनियम, 1947 के** अंतर्गत संस्थित किया जाएगा |

b. मोटर दुर्घटना सम्बंधित वादों का विचारण **मोटर यान अधिनियम, 1939 (1988 संशोधित)** के तहत **मोटर यान अधिकरण** में संस्थित होगा |

Scanned with CamScanner

c. कर से सम्बंधित मामले **आयकर अधिनियम, 1961** के तहत **आयकर अधिकरण** में ही संस्थित किया जाएगा |

d. राजस्व से सम्बंधित मामलों पर **सिविल प्रक्रिया संहिता** की **धारा 5** के तहत सिविल न्यायालय को कोई भी अधिकारिता नही होगी | इससे सम्बंधित मामले **उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन अधिनियम, 1950** में वर्णित प्रक्रिया के अनुसार ही निपटाए जायेंगे |

धुलाभाई बनाम मध्य प्रदेश राज्य के वाद में **उच्चतम न्यायालय** ने यह अभिनिर्धार्तित किया है कि ऐसे मामले में भी सिविल न्यायालय हस्तक्षेप कर सकती है यदि सम्बंधित न्यायाधिकरण ने प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन किया हो |

2. इसमें ऐसे भी मामले आ सकते हैं जिन्हें प्रश्नगत वाद के विचारण की अनुमति तो दे दी गयी है किन्तु किसी पश्चातवर्ती कारण से उसी वाद के सम्बन्ध में अतिरिक्त वाद का वर्जन कर दिया गया हो | उदाहरण – **सिविल प्रक्रिया संहिता** की **धारा 12** कुछ परिस्थितियों में अत्यधिक वाद का वर्जन करती है, यथा –

a. ऐसे मामले जिसमे प्रांगन्याय का सिद्धांत लागू होता हो |

Scanned with CamScanner

b. आदेश 23 के तहत किसी वाद में किये गये समझौते को चुनौती दिए जाने से सम्बंधित मामले |

विवक्षित रूप से वर्जन – दीवानी वाद विवक्षित रूप से दो आधारों पर वर्जित होते हैं –

1. विधि के सामान्य सिद्धांत के आधार पर –

a. राज्यकृत्य

b. भारतीय संविदा अधिनियम की **धारा 23** के आधार पर

2. लोक नीति के आधार पर

राज्यकृत्य – इस सिद्धांत के अनुसार किसी भी दीवानी न्यायालय को राज्य कृत्य से सम्बंधित वाद ग्रहण करने का अधिकार नही है | राज्यकृत्य से तात्पर्य ऐसे कृत्य से है जो राज्य के द्वारा उसकी प्रभुत्व संपन्न हैसियत के अंतर्गत किया जाता है जिससे किसी ऐसे व्यक्ति या ऐसे व्यक्ति की संपत्ति को क्षति पहुचती है, जो कार्य किये जाने के समय उस राज्य की प्रजा नही है | ऐसा **कस्तूरी लाल रलिया राम जैन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य** के वाद में कहा गया |

अधिकारिता का आभाव – भरवाड छोटा भागा बनाम भरवाड जंगा दहया, 1999 के मामले में कहा गया कि अधिकारिता सम्बन्धी अभाव का तर्क किसी भी समय उठाया जा सकता है, यहाँ तक कि द्वितीय अपील और निष्पादन की कार्यवाही में भी |

Scanned with CamScanner

किरण सिंह बनाम चमन पासवान के मामले में कहा गया कि ऐसी डिक्री जो बिना अधिकारिता के पारित की गयी है, उसको किसी भी स्तर पर चुनौती किया जा सकता है, यहाँ तक जमानत कार्यवाही में भी |

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner